अचरज

डॉ. चेतना उपाध्याय*

मैं आज भी अन्य दिनों की भाँति सामान्य संयमित रूप में अपने कार्यो को बखूबी अंजाम दे रही थी। अगले मरीज को मैंने इशारे से टेबल पर लेटने को कहा, अपना स्टेथॉस्कोप कान से लगाया और उसकी सामान्य जाँच करते हुए उससे पूछा- आपका नाम? ...जी प्रशान्त। क्या? क्या कहा? मैंनें हडबड़ाहट में पुनः पूछा उसने जवाब दिया- प्रशान्त।

'प्रशान्त' नाम सुन कर मैं सन्न सी रह गई। पास खड़ी नर्स को भी अजीब सा लगा मेरा व्यवहार, वो बोली, मैडम आप इसे पहले से जानती हैं ?

हाँ, नहीं तो ... मैं ठीक से सही-सही जवाब नहीं दे पाई। मेरा कंठ हलक से चिपका हुआ-सा लगा। गला तर करने को मैंने टेबल पर रखे पानी के गिलास को एक सांस में ही पूरा गटक लिया। पुनः उस मरीज की तरफ मुखातिब हुई। वो यों तो सामान्य मरीज की भाँति ही था मगर मुझे उसकी धड़कन सुनाई ही नहीं दे रही थी। मेरे हाथ कांप रहे थे। सिस्टर जरा इसका बी.पी. चेक करिए। मैंने अपने आप को संभालते हुए कहा। मेरे भीतर की बेचैनी कहीं मरीज व उसके रिश्तेदारों तक न पहुंच जाए। इस गरज से मैंने नाटकीयता की चादर ओढ़े वॉशरूम की तरफ कदम बढ़ा दिए। भीतर से चिटकनी लगाते ही मुझे बड़ा सुकून प्राप्त हुआ कि चलो अब मुझे कोई देख नहीं रहा। पर मैं क्या करूँ? हे ईश्वर तू ही मुझे सही राह दिखा सकता है। मरीज यों तो सामान्य रोग से ही ग्रसित है मगर नाम प्रशान्त है। यह नाम मुझे लगातार उद्वेलित कर रहा है।...

मैं लगभग विचारमग्न मुद्रा में ऊपर टकटकी लगाए छत को निहारने लगी, कि मुझे उपाय सूझा... मैं तुरंत बाहर आई। सिस्टर ने बताया कुछ... मगर मुझे सुनाई न दिया मैंने उससे कहा लिख दो... उसने लिखा भी मगर मैं उसे पढ़ ना पाई। मुझे उस मरीज से संबंधित कोई भी बात दिखाई या सुनाई नहीं दे रही थी। हाथ नैपकीन से पोंछते हुए मैं पुनः मरीज के सामने थी। जीभ दिखाओ, आखें खोलो ? उस तरफ देखो, नीचे देखो, भूख बराबर लगती है? शौच समय पर जाते हो ? मैं यंत्रचलित सी सामान्य परीक्षण करती रही, फिर पेन उठाया, पैड पर प्रिस्क्रिप्शन लिखने का प्रयास करते हुए प्रशान्त के परिजन को बुलाया और कहा, आप ऐसा कीजिए इसे किसी बड़े अस्पताल दिल्ली, बोम्बे या कहीं भी जहाँ आप सुविधाजनक रूप में जा सकते हैं, ले जाकर पूरी अच्छे से जाँच करवाइये क्योंकि इसकी जो जाँच होनी चाहिए, उस तरह की सुविधा इस अस्पताल में नहीं है। एक बार पूरी जाँच हो जाए कारण पता चल जाए तभी दवा दी जाए तो ज्यादा बेहतर होगा। वैसे घबराने जैसी कोई बात नहीं है, ये जल्द ही ठीक हो जाएगा।

डॉक्टर सा! इसे क्या हुआ है? नहीं, नहीं! ऐसा कुछ गंभीर या परेशान होने जैसा कुछ नहीं हैं। मैं तो चिकित्सक होने के नाते सिर्फ यही चाहती हूँ कि यह जल्द से जल्द ठीक हो जाए। अभी इसकी उम्र ही क्या है। दवा देने के पहले हमें उनके साइड इफेक्ट्स के बारे में भी सोचना होता है। सही-सही जाँच हो जाए तो उचित दवा दी जा सकती है। उसके पहले नहीं। पर डॉक्टर साहब आाप कोई तो दवा दीजिए जिससे इसकी तकलीफ कुछ तो कम हो। आगे जाँच करवाने जाने में भी तो टाइम लगेगा।

ऊ... हूं! आप परेशान मत होइये। ही इज ब्रेव बॉय, क्यूं प्रशान्त? ठीक है न, तुम्हें कोई दवा की अभी जरूरत ही नहीं है। खुश रहो, मस्त रहो। ऐसी छोटी-मोटी तकलीफों का क्या ? ये तो यूं ही आती जाती रहती हैं। अब आप जा सकते हैं। विश यू ऑल द बेस्ट प्रशान्त। कहते हुए मैंने अपनी कुर्सी छोड़ दी और केबिन से बाहर निकल आई। मुझे अन्दर बड़ी घुटन हो रही थी। मेरा इशारा समझ

* राजकीय जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, मसूदा, अजमेर।

प्रशान्त और उसके परिजन बड़े ही अनमने से वहाँ से चल दिए, कुछ बड़बड़ाते हुए। उनके चेहरे से मेरे प्रति आक्रोश साफ झलक रहा था। मगर मैंने उस की परवाह नहीं की। उनके जाने के बाद मुझे कुछ राहत महसूस हुई। खुली हवा में साँस लेने के बाद एक दो मरीज और देखे, फिर सिस्टर से कहा बाहर देखो कोई गंभीर मरीज हो तो भेज दो, नहीं तो मना कर दो, मुझे एक अर्जेन्ट मीटिंग में पहुँचना है।

अपनी आत्मग्लानि से बंधी मैं पुनः बाहर आई, मरीजों से क्षमा मांगते हुए बोली प्लीज हो सके तो आप शाम को आ जाइये, मेरा मीटिंग में पहुंचना बेहद जरूरी है। किसी के जीवन का सवाल है।

मेरी विव्रमता देख मरीज एक-एक कर चले गए। कोई विशेष गंभीर मरीज वहाँ था भी नहीं। ड्राइवर गाड़ी निकालो। मैंने आदेश के साथ ही अपना बैग उठाया और चल दी। सिस्टर के चेहरे पर अनेकों प्रश्न थे और मेरे पास किसी के भी किसी प्रश्न का कोई जवाब न था। मैं साक्षी भाव से अपने भीतर की उथल-पुथल को देख रही थी। मेरा चिकित्सक स्वरूप मुझे कोस रहा था कि मैंने अपने पेशे के साथ इंसाफ नहीं किया और उसके भीतर छुपा मेरा कोमल स्त्रीमन मुझे दिलासा दे रहा था जो हुआ, अच्छा ही हुआ। कुछ गलत होने से ज्यादा अच्छा है, कुछ नहीं होना...। कुछ ही समय में मैं अपने घर पर बेडरूम में पहुँच गई। ड्रेस चेंज किया हाथ मुंह धोए और पलंग पर पसर गई।

मैंने उस परमशक्ति को मन ही मन धन्यवाद दिया, जिसकी वजह से मुझसे गलती होने से छूट गई। यहाँ प्रश्न भी मेरे थे। उत्तर भी मेरे ही थे। डर, घबराहट भी मेरी थी, हौंसला भी मेरा था। मैं किशोरियों-सा अंतर्द्वन्द्व महसूस कर रही थी। साथ ही अपने आप को दिलासा भी दिला रही थी कि जो हुआ अच्छा ही हुआ।

कुछ ही देर में अखिलेश भी घर आ गए, क्या हुआ ? आज घर जल्दी आ गई। हाँ... वो... बस... ऐसे ही...। फिर मैंने सोचा, चलो अखिलेश को तो सच्चाई बता ही दूं।

पता है रात को जो सपना मुझे आया था न... अखिलेश झल्लाते हुए बीच में ही मेरी बात सुने बगैर चिल्ला पड़े। तुम और तुम्हारे सपने। मैं तो इन बेसिर-पैर की बातों से तंग आ चुका हूँ। जाने किसने तुम्हारी जैसी बेवकूफ को डॉक्टर बना दिया। मैं तिलमिला कर रह गई। आंखों से दो मोटे-मोटे से मोती गालों पर आ कर सूख गए। उन्हें आगे बहने का मौका ही न मिला। भीतरी घुटन भीतर ही रह गई। और आगे मैंने कुछ भी कहने सुनने की गुंजाईश ही महसूस नहीं की और स्वीकारा यही समाज है।... पलंग पर लेटते ही मैंने अपने आप को शांत किया कि वह रात का सपना चलचित्र की भांति पुनः मेरे सामने आ गया... मैंने अपने मरीज प्रशान्त को सिरदर्द से निजात के लिए दवा दी, दवा लेते ही उसके प्राण पखेरू उड़ गए और उसके घर वाले मेरी तरफ गुस्से से दौड़े कि अचानक मेरी आंख खुल गई, सपना टूट गया। मैं बुरी तरह घबरा गई। फिर उठ कर मैंने अपने मरीजों की लिस्ट चेक की, उसमें प्रशान्त नाम का कोई मरीज नहीं था। तब मैंने शांत भाव से सोने का उपक्रम किया। मगर आज क्लिनिक में प्रशान्त नामक मरीज को सामने पा मुझे मेरा सपना पुनः स्मरण हो आया। इस वजह से ही मेरे रोंगटे खड़े हो गए थे। और मैंने उस मरीज को दवा देने के बजाए टाल देना ही उचित समझा क्योंकि अगर उसे दवा देने से मेरा सपना... नहीं नहीं। अच्छा ही हुआ जो मैंने उसे दवा नहीं दी वरना न जाने मेरा क्या हश्र होता? मैंने अपने आप को समझाया, हो सकता है ईश्वर मुझे बचाना चाहते थे। तभी तो सपने से मुझे थोड़ा सा हिंट मिला और मैं संभल गई, वरना मेरे हाथों मरीज की मौत का सदमा, जिल्लत मेरे पूरे परिवार के लिए असहनीय हो जाती। हे ईश्वर! तेरा लाख-लाख धन्यवाद। तूने मुझे सही समय पर सचेत कर दिया।

अब इन विचारों के साथ मैं अपने आप को बहुत हल्का महसूस कर रही थी। ये हल्कापन मुझे खुशी से झूमने को मजबूर कर गया, मैं अपनी तन्हाई के साथ अपने गम और खुशी साझा करते हुए दालान में डले झूले पर आ बैठी। झूले पर धीमे-धीमे

झूलना मुझे हल्की-हल्की शीतल बयार का सा खुशनुमा अहसास दे रहा था। शनैः-शनैः यह शीतल हवा का झोंका मुझे 10 वर्ष पूर्व की घटना तक उड़ा कर ले गया। तब मैं मेडिकल एण्ट्रेंस देने जयपुर जा रही थी। रास्ते में नींद आ गई और एक दुर्घटना को मैंने अपने साथ घटित होते हुए देखा। आंख खुली तो वह मात्र सपना था। खैर परीक्षा से निपट निर्धारित समय पर अपने घर पहुंची तब मुझे पता चला कि वह दुर्घटना तो मेरे साथ घटित हुई थी मगर उसकी तीव्रता उतनी नहीं थी जिसे मैंने सपने में देखा था। वो पल भी मुझे खुशी से सराबोर करने हेतु काफी थे। खैर जो कुछ भी हुआ अच्छा, ही हुआ और धीरे-धीरे मैं उस स्वप्न को बड़ी ही आसानी से भूल गई। मुख्य परीक्षा का सेन्टर भी उसी शहर में आया। एक माह बाद तो मुझे वो स्वप्न भी याद न रहा और मैं अपने अन्य कार्यों में जुट गई। निर्धारित तिथि पर मैं पुनः अकेली बस यात्रा में थी। कारण कि मेडिकल एण्ट्रेंस के बाद मुख्य परीक्षा देने भी मुझे अकेले ही यात्रा करनी थी। खैर... बड़ी ही सावधानी रखने के बाद भी पुनः मेरे साथ दुर्घटना हुई। जिसे मैंने अपने पिछले सपने में बड़े वीभत्स रूप में देखा था।

हे भगवान! तेरा शुक्रिया। उस विकट स्थिति में भी मैं और लोगों की तरह समाज व ईश्वर को कोसने की बजाय धन्यवाद दे रही थी। उस वक्त हुआ नुकसान, तकलीफ मेरे सपने में हुई तकलीफ से बहुत कम था। इसलिए मुझे वह नुकसान अच्छा ही लग रहा था। क्या, क्यों, कैसे? मुझे कुछ समझ न आ रहा था। ऐसा लग रहा था कि दुनिया बनाने वाले ने पूरी स्क्रिप्ट अपने हाथों पूर्व में ही लिख दी है। हम अपने कर्मफलों के आधार पर उसमें रंग भरते रहते हैं। अच्छे/बुरे कर्म व अच्छी/बुरी शक्तियाँ सभी साथ ही चलती हैं। मुझे महसूस हो रहा था कोई न कोई शक्ति है जो मेरा बुरा चाहती है। हमेशा पीछे लगी रहती है परेशान करने को। मगर कोई ईश्वरीय शक्ति भी है जो हमेशा मुझे बचा ले जाती है। ईश्वर हार्दिक आभार।

मेरे आस-पास खड़े लोग आश्चर्यचकित हो मुझे देख रहे थे। भला बुरा बोल रहे थे। समय व जनमानस को कोस रहे थे, मेरे नुकसान को देख रहे थे। मुझे भला बुरा या अपनी तकलीफ दिखाई भी नहीं दे रही थी। मैं बोली, चलो जो हुआ अच्छा हुआ। मेरे सपने में देखे दृश्य जैसा होता तो सोच कर ही रूह कांप गई। कुछ उगलते बना न निगलते।

वैसे मैं चिकित्सा विज्ञान की छात्रा हूँ। हर बात को विज्ञान की कसौटी पर परखने के बाद ही स्वीकारती हूँ। मगर अभी लग रहा है मैं एक शांत स्वरूप आध्यात्मिक आत्मा से अतिरिक्त कुछ नहीं। विज्ञान के धरातल पर यह एक सामाजिक दुर्घटना मात्र है। इसके आगे-पीछे कहीं कोई समझ आने जैसा कुछ भी नहीं। मैं समझदार हूँ या निरी बेवकूफ मुझे खुद ही समझ नहीं आ रहा था। खैर जैसे-तैसे उस घटना से बाहर आ अपने सामाजिक जीवन में व्यस्त हो गयी। घर-परिवार, कॉलेज-चिकित्सालय के मध्य इतना व्यस्त हो गई कि वह सपना और वह हकीकत आपस में ही गडमड हो गई। फिर आगामी जीवन पर उक्त घटना का कहीं कोई असर दिखाई न दिया। समय के साथ सब कुछ हवा हो गया।

मगर आज लगभग 10 वर्ष पश्चात् वह घटना मेरी आंखों के आगे चलचित्र की भाँति घूम गई। इसके पीछे कोई ठोस प्रमाण नहीं था, न ही आज है। आज की घटना भी चिकित्सा जगत में स्वीकार्य नहीं हो पाएगी। जानती हूँ, अतः किसी से कुछ कह सुन भी नहीं सकती। क्या सही, क्या गलत, ईश्वर ही जाने; बस इसी उधेड़बुन में शाम हो गई। मैं अपने सामाजिक चोले में चिकित्साकर्मी व श्रीमती बजाज के रूप में व्यस्त होने का उपक्रम करने लगी।... होनी-अनहोनी सब कुछ उस असीम सत्ता के हाथ... मगर अचरज होना तो स्वाभाविक ही है।

□□□□